उपनिषदों में दार्शनिक विवेचन – उपनिषदों में 'अविद्या' के नाश के उपाय

कहे गये हैं और 'विद्या' या 'परब्रह्म' या 'परमात्मा' के स्वरूप का निरूपण है तथा किस प्रकार उस परब्रह्म का साक्षात्कार हो सकता है तथा दुःख की चरम निवृत्ति एवं आनन्द की प्राप्ति हो सकती है, ये सभी बातें उपनिषद् के ध्येय विषय हैं। आस्तिक दर्शन हो या नास्तिक दर्शन- सभी, उपनिषदों से अनुप्राणित हैं।

उपनिषदों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय 'आत्मा' है। संहिता से लेकर आरण्यक पर्यन्त जो 'ब्रह्म' आत्मा से भिन्न रूप में प्रतिपादित है, वह उपनिषद् में उससे अभिन्न माना गया है। संसार के जितने स्थूल तथा सूक्ष्म पदार्थ हैं, सभी आत्मा ही के रूप हैं। जितनी वस्तुएं संसार में हैं- सभी का सार 'आत्मा' ही है। आत्मा पूर्ण एवं अखण्ड है। आत्मा का ज्ञान अन्तःकरण की शुद्धि ही के द्वारा प्राप्त होता है।

आत्मा किंवा ब्रह्म को ही परमात्मा कहते हैं। यही 'परमात्मा', अविद्या के कारण बन्धन में पड़कर जीवात्मा कहलाता है, पूर्व जन्म के कर्म के अनुसार सुख और दुःख के भोग के लिए इस संसार में आता है और जन्म- मरण से युक्त हो जाता है। उपनिषद् का कहना है कि यह जीव अपने भोग के लिए स्वप्न में स्वयं नवीन - नवीन विषयों की सृष्टि कर लेता है। परन्तु वस्तुतः स्वप्न की भी सृष्टि ब्रह्म की ही है। जीवात्मा और ब्रह्म तो एक ही है। बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है कि

Scanned with CamScanner

वह न स्थूल है, न सूक्ष्म; न लघु है न गुरु; उसमें न रस है, न गन्ध; उसके न आँख हैं न कान। वह नित्य है। उसमें आकाश ओत-प्रोत है। ब्रह्म चक्षु, वाणी, मन आदि की गति से परे है। उसी की सत्ता से चक्षु, वाणी, मन, प्राण आदि अपने कार्य करते हैं—

"न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो न विद्मो न विजानीमो यथैतदनुशिष्यादन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि। इति शुश्रुम पूर्वेषां ये नस्तद्व्याचचक्षिरे"
(केनोपनिषद् 1/3)

अर्थात
उन सच्चिदानन्दघन परब्रह्म को प्राकृत अन्तःकरण और इन्द्रियाँ नहीं जान पाती हैं। ये वहाँ तक पहुँच ही नहीं पातीं। उस अलौकिक दिव्य तत्त्व में इनका प्रवेश ही नहीं हो सकता। बल्कि इनमें जो चेतना और क्रिया प्रतीत होती है, यह उसी ब्रह्म की प्रेरणा से और उसी की शक्ति से होती है।

ब्रह्म सर्वव्यापी है, कर्मों का नियन्ता है, साक्षी है, चेतन है, अद्वितीय और निर्गुण है—

"एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥"
(श्वेताश्वतरोपनिषद् 6/11)

सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन भी उपनिषदों में प्राप्त होता है। यहीं पर कर्म की गति का भी सविस्तार वर्णन प्राप्त होता है। पुण्य कर्मों से अच्छे योनि में तथा पाप कर्मों से कुत्सित योनि में जीव को जन्म ग्रहण करना पड़ता है। आगे यह भी कहा गया है कि कर्म निष्काम होना चाहिए। ईशावास्य उपनिषद् को कहा गया है—

"ईशा वास्यमिदँ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद् धनम्॥"

अर्थात अखिल ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी जड़ चेतन स्वरूप जगत है, यह समस्त ईश्वर से व्याप्त है, उस ईश्वर को साथ रखते हुए त्यागपूर्वक इसे भोगते रहो, इसमें

Scanned with CamScanner

आसक्त मत होओ, क्योंकि धन अर्थात भोग्य पदार्थ किसका है अर्थात किसी का भी नहीं है।

कठोपनिषद् की दूसरी वल्ली ने परम पुरुषार्थ और सदाचार के सम्बन्ध में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात कही है ~

अन्यच्छ्रेयोऽन्यदुतैव प्रेयस्ते उभे नानार्थे पुरुषँ सिनीतः।
तयोः श्रेय आददानस्य साधुर्भवति हीयतेऽर्थाद्य उ प्रेयो वृणीते॥

अर्थात
श्रेय प्रेय से भिन्न है। इन दोनों के अर्थ अर्थात विषय भिन्न हैं और ये जीव को अलग-अलग प्रकार से बाँधते हैं। जो श्रेय को चुनता है, उसका कल्याण होता है, परन्तु जो प्रेय को चुनता है, वह पुरुषार्थ से दूर हो जाता है।

विद्या श्रेय है और अविद्या प्रेय है। प्रेय से श्रेय अधिक उपादेय है। जो विद्या और अविद्या की भिन्न-भिन्न सिद्धियों को समझता है और अपने उच्चतर एवं एकमात्र लक्ष्य आत्मोपलब्धि से च्युत नहीं होता, वह दोनों का सदुपयोग करके लाभ उठा सकता है। ईशावस्य उपनिषद् में कहा गया है-

"विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयँ सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते॥"

अर्थात जो विद्या और अविद्या इन दोनों को साथ-साथ जानता है, वह अविद्या से मृत्यु को तरकर ज्ञान से अमरता को प्राप्त कर लेता है।

उपनिषदों में धर्म की व्याख्या भी अनेक स्थानों पर उपलब्ध होती है। छान्दोग्योपनिषद् में कहा गया है कि धर्म के तीन भाग हैं। यज्ञ, स्वाध्याय और दान मिलकर प्रथम स्कन्ध या भाग होता है। तपस्या ही दूसरा भाग है। आचार्यकुल में रहता हुआ अपने को तपस्वी बनाता है, यह तीसरा भाग है। वे सभी पुण्यलोकवाले होते हैं, परन्तु इनमें से ब्रह्मनिष्ठ मुक्ति को पाता है—

'त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति प्रथमस्तप एव द्वितीयो ब्रह्मचार्याचार्यकुलवासी तृतीयः। अत्यन्तमात्मान-माचार्यकुलेऽवसादयन्। सर्वे एते पुण्यलोका भवन्ति, ब्रह्मसंस्थोऽमृतत्वमेति।' (2/23/1)

Scanned with CamScanner

विश्वबन्धुत्व और समदर्शिता की भावना ईशावास्योपनिषद् में मिलती है -

"यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते॥"

Dhananjay Vasudeo Dwivedi

Scanned with CamScanner